INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND INTERDISCIPLINARY STUDIES
(Peer-reviewed, Refereed, Indexed & Open Access Journal)
DOI : 03.2021-11278686 ISSN : 2582-8568 IMPACT FACTOR : 5.828 (SJIF 2022)

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी चेतना

(Women consciousness in the Novels of Maitreyi Pushpa)

डॉ. सैनबा गोलदार
सह आचार्या हिन्दी,
जवाहर लाल नेहरु राजकीय महाविद्यालय, पोर्ट ब्लेयर,
अण्डमान निकोबार द्वीपसमूह,

DOI No. 03.2021-11278686 **DOI Link ::** https://doi-ds.org/doilink/11.2022-55187354/IRJHIS2211003

प्रस्तावना :

हिन्दी की महिला रचनाकारों की श्रेणी में नारी चेतना के स्वर को बुलंद करने वाली लेखिका के रूप में मैत्रेयी पुष्पा का विशिष्ट स्थान है। साहित्य जगत की बहुचर्चित नामों में एक है मैत्रेयी पुष्पा। नारी स्वातंत्र्य एवं अस्मिता के लिए अपनी तूलिका से लड़ने वाली सशक्त लेखिका मैत्रेयी पुष्पा का जन्म सन् 1944 में उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ में हुआ। हिन्दी साहित्य में मैत्रेयी पुष्पा की तरह लिखने वाले रचनाकार बहुत ही कम है। जिन्होंने गहरी आत्मीयता तथा मानवीय संवेदना के साथ जीवन के धडकते क्षण प्रस्तुत किया है। उनकी रचनाओं में अनुभूति की ऊष्मा और अनुभव की ऊर्जा है।

मैत्रेयी पुष्पा की अधिकांश रचनाएँ भारत के ग्रामीण जीवन से संबंधित है। आज भी भारतीय गाँवों में स्थित जो पूंजीवादी व्यवस्था है उसके विरुद्ध उल्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से आवाज़ उठायी। इनकी रचनाओं में निम्न वर्गीय नारी अपने अस्तित्व और स्वाभिमान की रक्षा के लिए पुरुष प्रधान समाज द्वारा किए गए मूल्यों में कमी से टकराती है। निडर, स्वाभिमानी, दुःखी नायिकाएँ इनकी रचनाओं की विशेषता है।

'फाइटर की डायरी' 'प्रेयसी का सपना', 'गोमा हँसती है', 'लालमणियाँ', 'चिन्हार' आदि इनकी कहानी संग्रह है। 'गुनाह–बे–गुनाह', 'त्रियाहठ', 'इदन्नमम', 'चाक', 'झूलानट', आँगन पाखी' आदि प्रसिद्ध उपन्यास है। 'गुडिया भीतर गुडिया' इनकी जीवनी है। उनका नाटक 'मन्द्राकान्ता' है।

'अल्मा कबूतरी' उपन्यास पर उनको 'सार्क लिटररी पुरस्कार' प्राप्त हुआ। इस उपनयास की नायिका 'अल्मा' निम्नवर्ग की लड़की, अपनी अस्तित्व और स्वाभिमान की रक्षा के लिए पुरुष प्रधान समाज द्वारा किए गए अवमूल्य से टकरा रही है, वहीं दूसरी ओर अपने चारों ओर फैले अन्याय, अत्याचार, शोषण एवं अमानवीयता आदि का खुला प्रतिवाद कर रही है। अंग्रेजी शासनकाल में 'कबूतरा वर्ग' को निम्न गुनहगार के रूप में देखा था। 'सदियों से अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्षरत बुंदेनखण्ड की कबूतरा जनजाति कथावस्तु की आधार भूमि की तरह प्रतिष्ठित होकर भी वर्तमान की संपूर्ण सामाजिकता को आवृत कर आज़ाद भारत के पचास सालों के जटिल यथाचित्र की कटु प्रासंगिकता को रेखांकित करती हैं –किसी दायरे में बंधकर नही रह जाती।

चित्रफलक इतना विस्तार पाता है कि समूचा भारतीय समाज ही कबूतरा विवशताओं में जकड़ा खड़ा हो जाता है। अंग्रेजों ने जिन जनजातियों को अपराधी करार दिया था – वे स्वतंत्र भारत में भी तमाम नारेबाजियों और सबके लिए समान अवसर की प्रदर्शनकारी संरचना के बावजूद समाज की मुख्यधारा से अलग–थलग पड़ी हुई है। उनको समाज से एकसार करने की व्यवस्था के नाटक का उद्देश्य अपने हित साधन के लिए इस्तेमाल कर लेने के सिवा कुछ नहीं–'मंत्री है, तभी तो वह करेगा, अल्मा को मोहरे की तरह इस्तेमाल। उसके चुनाव क्षेत्र में कितनी कबूतरा बस्तियाँ है ? अल्मा को जीप झंडी की तरह लहराता फिरेगा कि देखो, मैंने शहीद होकर दिखा दिया।''[1]

'अल्मा कबूतरी' की अल्मा संघर्ष करते–करते थक जाती है तब समझौता कर लेती है अपने आप से। परन्तु समझौता करते–करते वह हारती नहीं बल्कि विजय हासिल करती है। जिन कज्जा लोगों ने उस पर अत्याचार किया था उसका शोषण किया था, उन पर शासन करने के लिए तैयार है। अल्मा से श्रीमती अल्मा शास्त्री बनकर वह विधान सभा चुनाव में लड़ने को तैयार है। जिस देह से कभी हारती थी उसी देह से वह विजयी भी होती है।

''अल्मा का जादू चल रहा था, नाथू बाजार से खाना लाता, वह करीने से परसती। गिलासों में पानी भरती। ध्यान रखती किसके पास क्या कम हो रहा है ? कमी होती, तुरन्त पेश करती।''[2]

'झूलानट' एक लघु उपनयास है। इस उपनयास की नायिका शीलो हिन्दी उपन्यास के कुछ न भूले जा सकने वाले चरित्रों में एक है। नायिका शीलो उसकी स्त्री शक्ति को बेहद आत्मीय, पारिवारिक सहजता के साथ मैत्रेयी ने फोकस किया है।

मुंशी प्रेमचंद का कथन है, 'मैं विवाह को आत्म विकास का साधन मानता हूँ।''[3] शीलो बाल किशन और अपने संबंध को विवाह के दायरे में नहीं बाँधना चाहती, बल्कि इससे भी कुछ परे–जहां केवल तन मन का मेल है। जहां शीलो का ही नहीं, बालकिशन का भी विकास हो रहा है। स्त्री चेतना का अत्यंत सुंदर रूप शीलो में दिखाई देता है। अलका प्रकाश लिखती है –''नारी वादी कथाकारों ने धर्म एवं आस्था तथा परम्परा एवं मूल्यों में समय के साथ परिवर्तन होना आवश्यक माना है किसी भी संबंध को वे तब तक ही निभाना चाहती है जब तक वे उसके व्यक्तित्व के निर्माण में बाधा न प्रस्तुत करें।''[4]

शीलो गाँव की साधारण सी औरत है। शीलो न ही बहुत सुन्दर है न बहुत सुधड लगभग अनपढ़। न समाज शास्त्र जानती है, न उसने मानो विज्ञान पढ़ी है। पति उसकी छाया से भागता है। मगर तिरस्कार, अपमान और उपेक्षा की यह मार ने शीलो को आत्महत्या की ओर ले जाती है। 'झूलानट' के कथानक में शीलो, बाल किशन तथा उसकी माँ केन्द्र में है। सुमेर परिधि के बाहर भले ही है लेकिन उसकी उपस्थिति शीलो, बाल किशन तथा उसकी माँ के शांत जल से जीवन में फेंके गए पत्थर सी होती है। जो भले ही निर्जीव हो परन्तु शांत जल में हलचल मचाने के लिए पर्याप्त होता है –

''क्वार के महीने में आए थे सुमेर भइया, एक महीना मुश्किल से बीत पाया है कि कार्तिक में फिर। उनके आने–जाने को लेकर बालकृष्ण का दिल क्यों सुलगता है ?.....अम्मा सुमेर भैया के सौ खून माफ करें बैठी है..... मगर यह शीलो।''[5]

'चाक' हिन्दी उपन्यास धारा में मील का पत्थर माना जा चुका है। 'चाक' सामन्ती समाज के भीतर व्याप्त हिंसा और स्वार्थ की टकराहट की प्रामाणिक कहानी है। इस समाज का ताना–बाना हिंसा और सेक्स से बना है। मैत्रेयी इन दोनों को ही एक कथाकार की निगाह से पात्रों के आचार–विचार के रूप में प्रभावशाली ढंग से पकड़ती है। 'चाक' में बिना बढ़ बोलेपन के उन्होंने गाँव की स्त्री की जिस चेतना का विकास किया है। वह उपन्यास कला पर उनकी पकड़ को रेखांकित करता है।

'चाक' उपन्यास में ग्रामीण समाज की विधवा नारी की दयनीय स्थिति को दिखाया है। उसकी सारी खुशियाँ पति की मृत्यु के साथ समाप्त हो जाती है। इस उपन्यास की नारी पात्र रेशम की हत्या इसी का उदाहरण है। रेशम विधवा होने के बावजूद किसी से प्रेम करती है और गर्भवती होकर सामान्य जीवन जीना चाहती है लेकिन सास को वह मान्य नहीं और कहती है –''मेरे बेटे की मृत्यु से दगा करने वाली हरजाई, बदकार। तेरा मुँह देखने से नरक मिलेगा, खेती जलेगी अकाल पड़ेगा। गंगा में सौ अस्नान करो तो भी महापाप घटना नहीं।''[6]

'इदन्नमम' तीन पीढ़ियों की बेहद सहज और संवेदनशील कहानी है। इदन्नमम के आंचल में छिपा है विंध्या का आंचल विंध्या की पहाड़ियों से घिरे वर्णित गाँव श्यामली और सोनपुरा के जनजीवन की जीवन्त धड़कनों को यह उपनयास सांस दर सांस कहता है। इस उपनयास की नायिका मंदा का संघर्ष कुछ अलग प्रकार की है। वह अपने गाँव के लिए लड़ने मरने के लिए तैयार है। सोनपुरा गाँव की शक्ति तथा चेतना मंदा ही है। मंदा बहुत शिक्षित नहीं है। अपने गाँव के कल्याण के लिए वह संकल्प बद्ध है। गाँव में व्याप्त बेरोजगारी, भुखमरी तथा अन्याय को वह मिटा देना चाहती है।

'मंदा केवल परम्परागत खेती–किसानी वाला सनातन दिमाग नहीं है। नई सामाजिक–आर्थिक चुनौतियों और राजनीतिक कतर–ब्यौतों को समझती हुई वह उस अगले मशीनी युग (कलयुग) को लेकर भी सजग है, जिसमें नई मनुष्यता को अपना सफर तय करना है। अगर आज वह अभिलाष सिंह जैसे ठेकेदारों के खिलाफ लोकशक्ति की प्रतीकात्मक आवाज बन खड़ी है .....'इदन्नममा' का अर्थ ही यही है कि यह लड़ाई अब अस्पताल और निजि जायदाद के लिए नहीं, उस विराट जन समूह के सुखद ऐतिहासिक भविष्य के लिए है, जिसे भारत माता कहते है। इस दृष्टि से यह कथानक भरा–पूरा, अत्यंत सुगठित और योजनाबद्ध है। इसे हम अगर लोकगाथा की कथा कहें तो शायद सबसे ज्यादा सटीक होगा।''[7]

'इदन्नमम' की एक पात्र (माधो पुरवाली बहू) कुसुमा है। कुसुमा यसपाल की पत्नी है लेकिन वह कुसुमा को न अपनाकर किसी अन्य स्त्री के साथ रहता है। कुसुमा के मन में दाऊजी (अमर सिंह–काका) के प्रति प्रेम पैदा हो जाता है। कुसुमा गर्भवती होती है और अपने पति तथा परिवार के सामने यह स्वीकारती है कि बच्चा दाऊजी का है। कुसुमा दाऊजी के बच्चे को जन्म देती है। गर्व से उसका पालन पोषण करती है। मैत्रेयी जी यह दिखाना चाहती है कि यदि यसपाल एक पत्नी होते हुए दूसरी स्त्री के साथ समाज में रह सकता है तो कुसुमा को भी प्रेम करने का अधिकार है। कुसुमा गर्व से कहती है मंदा और बऊ से –''ताजिन्दगी दादा ने बेबस, लाचार और दीन–हीनों के लिए लड़ाई लड़ी है। हम तो उसी जागीर के वारिस बनना चाहते है।''[8] अपने पात्र कुसुमा के विषय में मैत्रेयी लिखती है –''इदन्नमम की कुसुमा भाभी को सवालों के घेरे में रखा जा सकता है, जहाँ वह बहू के चचिया ससुर से शारीरिक संसर्ग और फिर बेटा पैदा होने की घटना से गुजरती है, ऐसा

क्यों होता है ? इस क्यों का जवाब ही सर्जनात्मक प्रक्रिया में कृति का सरोकार बनता है। जब कोई वर्चस्व इतना शपित हो जाता है कि व्यक्ति की आकांक्षाएँ, सपने, जिन्दगी पिसने लगे तो फिर नीति–रीति के बंधन अपना अर्थ खोने लगते हैं। श्लीलता की रक्षा के लिए मैं जिन्दगी को तबाह कर दूँ, ऐसा दबाव मानने से इंकार करती हूँ। अपने लेखन से मेरी सबसे पहली अपेक्षा रहती है , जीवन के पक्ष में खड़े होना जीवन गतिशीलता के साथ रहे।''[9]

डॉ. कल्पना अग्रवाल लिखती है –''मैत्रेयी पुष्पा का उपनयास 'इदन्नमम' की नायिका मंदाकिनी वास्तविक अर्थ में एक जुझारू युवती है जो केवल परिवार और समाज द्वारा स्त्री के लिए निर्मित बंधनों को ही नहीं तोड़ती वरन् उस शोषण के विरुद्ध भी तनकर खड़ी हो जाती है, जो आज के नेताओं और माफिया ठेकेदारों द्वारा आदिवासियों और ग्रामीणों पर कहर के रूप में बरसाया जा रहा है।''[10]

'बेतवा बहती रही' उपनयास बेतवा की असंख्य बेटियों को समर्पित है। 'बेतवा बहती रही' की उर्वशी की व्यथा कथा भारत की न जाने कितनी बेटियों की पीड़ा को इस उपन्यास में दिखाया है। इस उपनयास की कथा के केन्द्र में उर्वशी है। अजीत के बाद के कोई बच्चे नही बचे। उर्वशी नहीं मरी क्यों कि वह उर्वशी थी। उर्वशी की माँ के शब्दों में –''उरबसी बेटी की जात हती सो जी गयी, लरका होतो तौ न बचतौ।''[11]

लड़की को कठोर जान कहा जाता है। उर्वशी लड़की थी, कठोर जान थी इसलिए बच गयी बची नहीं जीवन के कठोर आघातों को सहती रही, अपनों के दिये दुःख झेलती रही, उनके लिए मिटती रही और अपने ही बेटे देवेश को देखने के लिए तरसती रही। उर्वशी के घर गरीबी पसरी पड़ी थी। किसी तरह जीवन कट रहा था। उर्वशी नाम से ही नहीं रूप से भी उर्वशी थी। मैत्रेयी के शब्दों में – ''कृपणता तो लक्ष्मी ने बरती थी, विधाता ने रूप तो उसे जी खोलकर दिया था।''[12]

'बेतवा बहती रही' उपन्यास मैत्रेयी पुष्पा के दूसरे उपन्यासों से भिन्न है। 'इदन्नमा', 'झूलानट', 'चाक', 'अल्मा कबूतरी' आदि की स्त्री पात्र संघर्षरत पराजित न होने तथा जुझारू रूप प्रस्तुत है वह इस उपनयास में नहीं मिलता। यह उनकी प्रारंभिक दौर का उपनयास है, संभव है प्रारंभिक दौर होने के कारण लेखिका उर्वशी को मंदा, शीलो, अल्मा का रूप नहीं दे सकी। या शायद मैत्रेयी जी उर्वशी को उर्वशी ही बने रहने देना चाहती हो।

मैत्रेयी पुष्पा ने समाज में स्त्री की स्थिति को संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। उपनयास साहित्य में नारी पात्रों के माध्यम से यह दर्शाया है कि जो नारी किसी समय पुरुष की प्रति छाया थी जिसके लिए समाज में अनेक कठिनाईयाँ थी ग्रामीण परिवेश में सामंती अत्याचारों के विरुद्ध अपने लोकतांत्रिक जीवन की आकांक्षाओं की लड़ाई लड़ती है। वह हार नहीं मानती और अपनी बौद्धिक क्षमता से अपने अधिकारों और अपनी पहचान की संघर्ष लड़ती है।

संदर्भ ग्रंथसूची :

1. मैत्रेयी पुष्पा स्त्री होने की कथा, सं. विजय बहादुर सिंह, पृष्ठ सं. 187–188 संपादक : किताब घर प्रकाशन नई दिल्ली।
2. अल्मा कबूतरी : मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ सं. 294, प्रकाशक : राजकमल।
3. मैत्रेयी पुष्पा के उपनयास : एक अनुशीलन, डॉ. ऋचा शर्मा, पृष्ठ सं. 52, प्रकाशक : नमन प्रकाशन।

4. वही, पृष्ठ सं. 52

5. झूलानट : मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ सं. 103–104, प्रकाशक : राजकमल।

6. 'चाक' : मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ सं. 18, प्रकाशक : राजकमल।

7. मैत्रेयी पुष्पा स्त्री होने की कथा : सं. विजय बहादुर सिंह, पृष्ठ सं. 118–119, संपादक : किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली।

8. मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास : एक अनुशीलन – डॉ. ऋचा शर्मा, पृष्ठ सं. 27, प्रकाशक : नमन प्रकाशन।

9. वही, पृष्ठ सं. 28

10. उत्तर शती का हिन्दी साहित्य – डॉ. सुरेश कुमार जैन, पृष्ठ सं. 83, प्रकाशक :अन्नपूर्णा प्रकाशन।

11. बेतवा बहती रही : मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ सं. 14, प्रकाशक : किताबघर, नई दिल्ली।

12. मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास : एक अनुशीलन, डॉ. ऋचा शर्मा, पृष्ठ सं. 19, प्रकाशक : नमन प्रकाशन।